शोध साहित्य SHODH SAHITYA
INTERNATIONAL PEER REVIEWED E-RESEARCH JOURNAL
(समसामयिक विषयों पर केंद्रित बहु विषयक मासिक ई-शोध पत्रिका)
E-ISSN 2584-2447
Year – 1
Vol – 4
February
2024

मैथिलीशरण गुप्त का काव्य और नारी चेतना

नीरज कुमार द्विवेदी
सहा.प्राध्यापक - हिंदी विभाग
दयानन्द वैदिक महाविद्यालय, उरई

सारांश

कवि मैथिलीशरण गुप्त राष्ट्रभाषा को गुणवत्ता प्रदान करने वाले राष्ट्रीय चेतना एवं संस्कृति के गायक थे। स्वभाव से विनम्र, शिष्ट और वैष्णव थे। महात्मा गांधी के अनुयायी होने के कारण पतित उद्धार और नारी स्वतन्त्रता के समर्थक थे। उनके काव्य में उद्दात गुणों से सुसज्जित नारी पात्र है।

बीज शब्द

नारी, उद्दात, मर्यादा, सशक्तिकरण, कोमल, शिष्ट

भूमिका

नारी के प्रति तीव्र संवेदना एवं सर्वाधिक प्रबल विचारों से गुप्तजी ने साकेत को आविर्भाव किया। गुप्तजी को भारतीय नारी में अगाध श्रद्धा थी। द्विवेदी युग में नारी की तीव्र प्रतिक्रिया का प्रतिनिधित्व साकेत यशोधरा जैसे काव्य ग्रंथ करते है।

शोध विस्तार

गुप्त जी की ये पंक्तियाँ उनकी नारी विषयक धारणा को स्पष्ट करने में सक्षम हैं -

"अबला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी ।
आँचल में है दूध और आँखों में पानी ॥"[1]

यह नारी का भले ही कोमल, मातृत्व रूप हो, उसका दुःखी रूप भी हो, पर गुप्त जी की नारी अबला ही नहीं सबला भी है। 'द्वापर' में नारी का यही रूप उभर कर सामने आया है। एक ओर उन्होंने नारी पर लगाये बन्धनों का यह कहकर विरोध किया -

"नरकृत शास्त्रों के बन्धन हैं सब नारी ही को लेकर।
अपने लिए सभी सुविधाएँ, पहले ही कर बैठे नर ॥"[2]

तो दूसरी ओर उसकी महत्ता स्थापित करने के लिए उसे नर से भारी सिद्ध किया -

"एक नहीं दो-दो मात्राएँ नर से भारी नारी ।"[3]

गुप्त जी ने 'द्वापर' में नारी की समस्या को व्यापक रूप में चित्रित किया है। इसमें कवि ने 'विधृता' नारी-पात्र की कल्पना करके नारी की दयनीय, शोषित, उपेक्षित और असहायावस्था की मार्मिक व्यंजना की है। पुरुष के अत्याचारों का स्पष्ट उल्लेख करते हुए वे कहते हैं-

"अविश्वास हा ! अविश्वास ही, नारी के प्रति नर का।
नर के तो सौ दोष क्षमा हैं, स्वामी है वह घर का।"[4]

नारी की यथार्थ दुरावस्था को उन्होंने कई रूपों में उभारा है। गुप्तजी के काव्य में नारी के विविध रूप परिलक्षित होते हैं। कहीं वह कुलबधू रूप में गृहस्थ की मर्यादा का निर्वाह करती दिखायी देती है, गृहस्वामिनी रूप में गृहस्थ जीवन का भार वहन करती हुई लक्षित होती है, कहीं प्रिय के आलिंगन में बद्ध होकर निवेदन करती हुई, कहीं विरहिणी रूप में रूप में अखिल विश्व को आँसुओं से भिगोती हुई कहीं सृष्टि की ऊर्जा बनकर उर्ध्व चेतना को स्फुटित करती हुई, कहीं वीरांगना रूप में हुंकार भरती हुई कहीं पुत्र-वत्सला रूप में स्नेह, प्रेम एवं वात्सल्य का पराग विकीर्ण करती हुई, कहीं जनसेविका रूप में अपने अस्तित्व को ही समाज के लिए अर्पित करती हुई हमारे समक्ष उपस्थित हुई है। वास्तविकता यह है कि गुप्त जी नारी स्वतन्त्रता के पक्षधर ही नहीं, वरन् वे नारी की पूर्ण स्वतन्त्रता के आकांक्षी हैं।

युग-युग से पराक्रान्ता नारी के आँसू को पोंछकर कवि ने उसे पुरुषों द्वारा स्नेह और सम्मान दिलाया है। लक्ष्मण की उर्मिला के चरणों में गिर पड़ना, स्वयं को उसका 'दास' कहना इसी प्रयोग से प्रेरित है। दम्पत्ति के सहज स्नेह और सौहार्द्र के परिणामस्वरूप वह

हृदय देवी का आसन ग्रहण करती है। कवि ने 'अबला' शब्द का यत्र-तत्र स्पष्टीकरण किया है। इस शब्द के पीछे व्यंग्य के आक्षेप का भी प्रयोग हुआ है। लक्ष्मण की उक्ति है -

"अवश-अबला तुम ? सकल बल वीरता, बाँटती हो दिव्य फल फलती हुई ।"[5]

यह उक्ति नव-युग चेतना से ओत-प्रोत है। उर्मिला के उत्तर द्वारा वे नारी मन की जिस निरीहता का स्पष्टीकरण करते हैं उससे संवेदनशील पृष्ठभूमि का निर्माण होता है। उर्मिला का नारीमन कहता है -

"खोजती हैं किन्तु आश्रय मात्र हम, चाहती हैं एक तुम सा पात्र हम,
आन्तरिक सुख-दुःख हम जिसमें धरें, और निज भव-भार यों हल्का करें।"[6]

गुप्तजी नारीत्व के सभी पक्षों का संस्पर्श करते हैं। साकेत की नारियाँ पति और पुत्र की कल्पना कामना में सतत सक्रिय हैं। उर्मिला भ्रातृ-भाव की पूर्ति के लिये आत्मोत्सर्ग कर देती है। वह उदारतापूर्वक 'अपना भाग' त्याग देती है और 'प्रिय पथ का विघ्न न बनने' का कठोर संकल्प करती है। सीता पति की 'धर्मचारिणी' होने के लिये अटल अनुरोध करती है। उनके कथनानुसार "पति पत्नी की गति है।" पति के गौरव में नारी का अर्द्ध-भाग है। वनवासी जीवन में सीता इसी महात् उद्देश्य का प्रमाण प्रस्तुत करती हैं। अन्य नारियों को भी कवि समन्वित दृष्टि से देखता है। कौशल्या का करुण वात्सल्य, निराभिमान मातृत्व और दयनीय वैधव्य अत्यधिक सुसंवेद्य है। मानिनी सुमित्रा का गर्वोद्धत क्षत्रियत्व तथा उत्सर्ग भाव वरेण्य है। कैकेयी की कारुणिक स्थित, विश्व-व्रीड़ा तथा उसका 'भावना की भुक्ति' भी संवेदनशील हो उठती है। इसी प्रकार माण्डवी 'अपने प्रभु की पुजारिन' बनी हुई भरत को सत्कर्त्तव्य की ओर उन्मुख करने में सहायक हैं। श्रुतिकीर्ति भी अपने त्याग, बलिदान एवं शौर्य का परिचय देने वाली पतिभक्ता नारी है। साकेत की अन्य नारियाँ भी 'रामकज क्षण भंग शरीरा' घोषित करके पतियों और पुत्रों को सेना में सहर्ष भेज रही हैं। इस प्रकार नारियों की कर्त्तव्यनिष्ठा, उनकी अन्तर्वाह्य क्रियायें और उनकी सहिष्णुता का परिचय देकर कवि ने उन्हें भाव-विभोर होकर श्रद्धा समर्पित की है। संक्षिप्त रूप से कहा जा सकता है कि गुप्त जी ने अपने काव्य

में नारी को उच्चतम स्थान प्रदान किया है। उसे पुरुष की यात्री संरक्षिका और प्रेरणा के साथ-साथ पुरुष के कार्यों में सहायिका के रूप में प्रस्तुत किया । मैथिलाशरण गुप्त नारित्व को अत्यन्त गौरवपूर्ण आसन पर प्रतिस्थित किया है साकेत में नारी भावना का उत्कृष्टतम रूप है।

यशोधरा मैथिलीशरण गुप्त की कालजयी रचना है इसके माध्यम से गुप्त जी ने नारी के भावनाओं को उद्घाटित किया है। उनके त्याग और समर्पण के अद्वितीय भाव को उकेरने का प्रयास किया गया है। पुरुष प्रधान समाज में नारी के त्याग को नजरअंदाज किया गया था, जिसे गुप्तजी ने अपने साहित्य में प्रधान बना दिया। उन्होंने यशोधरा, उर्मिला जैसे उपेक्षित नारियों को उचित सम्मान दिलाने का प्रयत्न किया। गुप्त जी चेतना प्रवण कवि है। युग की आकांक्षाओं का प्रतिनिधित्व करना और युग- बोध को आत्मसात करना उनके लिए सहज था।

यशोधरा घटना - प्रधान काव्य ना होकर चरित्र -प्रधान और काव्य प्रधान है। उनका केंद्र सिद्धार्थ ना होकर यशोधरा है,और उसी के मानसिक विकास दिखाने तथा मनोभावों का विश्लेषण करने के लिए घटनाओं का अनुषांगिक महत्व दिया गया है। उन्हें यशोधरा से जोड़ने के लिए कवि का आया स्पष्ट झलकता है। धारा प्रवाह बीच-बीच में टूट गया है इसका कारण गुप्त जी की विभक्त आस्था, मानसिकता और दुविधा भी है। गुप्त जी ने अपने काव्य में उन नारियों को स्थान दिया जो काव्य ग्रंथ में सदा के लिए उपेक्षित पात्र बन गई थी। जैसे - कैकेयी, उर्मिला, यशोधरा आदि उनके काव्य गुरु 'महावीर प्रसाद द्विवेदी जी के मार्गदर्शन पर उन्होंने काव्य लिखना आरंभ किया था।

"करते तुलसी भी कैसे मानस नाद
महावीर का यदि उन्हें मिलता नहीं प्रसाद।।"[7]

आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने सफल प्रबंधन काव्य की कसौटी बताते हुए लिखा था -" जिस कवि में कथा के मार्मिक और भावात्मक स्थलों को पहचानने की जितनी अधिक क्षमता होगी वह उतना ही उत्कृष्ट कोटि का प्रबंध काव्य होगा"।[8] गुप्त जी ने यशोधरा में सदैव याद रखा है कि वेदना की अग्नि में तपकर प्रेम की मलिनता गल जाती है। कवियों ने मानव हृदय की

सामान्य भाव भूमि पर विरह की ऐसी गंगा प्रवाहित की है जिस की धारा में हृदय का सारा कलुष वह जाता है। विरह की प्रतिभा गुप्त जी के हृदय में यशोधरा का रूप धारण कर अवतरित हुई है।यशोधरा का पृष्ठ-पृष्ठ उसके आंसुओं से गीला हो उठा है। वियोग के समय वियोग अधिक दारूण होता है। प्रिय के प्रवास के समय न जाने कितने भाव विरहिणी के हृदय में उदित होते हैं और मिलन की बेला में वह हृदय में भी वह उदित हुए होंगे पर वह पति के मार्ग में ना आकर सब कुछ सहने के लिए तैयार हो जाती है -

"हे मन तू प्रिय पथ का विघ्न ना बन।।"[9]

प्राचीन विरह वर्णन की प्रणाली के अंतर्गत आचार्यों ने जिस 10 कामदशाओं का उल्लेख किया है। उनमें से सबका अनुसरण तथा उपयोग तो आधुनिक कवि नहीं करते परंतु अभिलाषा, चिंता, स्मृति, गुण, कथन, उद्वेग, उन्माद आदि स्वभाविक दशाएं स्वतः विरह काव्य में आ जाती है। साकेत में भी इन का समावेश हुआ है अतीत की स्मृतियों की टीस रह-रहकर उठती है और उर्मिला की भावनाओं को तीव्र कर देती है। जिससे वह अर्ध मुरझा अवस्था में प्रलाप करने लगती है। इसी प्रलाप अवस्था में काल्पनिक सखियां बनाकर वह सुरभि, गूंगी निंदिया, सारिका, चातकी आदि से अपनी करुणा कथा कहती है।

उर्मिला में अपने प्रिय लक्ष्य के प्रति वह समर्पण की अद्भुत भावना है जो अन्यत्र नहीं है वह अपने प्रिय के लिए सब कुछ समर्पित करने के लिए प्रस्तुत है। वह इस भाव को प्रकट करती है कि सारी रात बैठे-बैठे बीत बीत गई फिर तो स्वप्न भी नहीं आया। प्रिय के दर्शन भी तो न हो सके। तारे भी उड़ गए क्या वह अब प्रभात की किरणों की गणना करें, इस भाव को व्यक्त करती हुई वह अपनी सखी से कह रही है। सिद्धार्थ द्वारा अपने परित्याग से यशोधरा को हार्दिक क्लेश होता है ।वह यह समझती है कि उसके स्वामी ने उसे अच्छी तरह से नहीं समझा। यदि उन्होंने उसे ठीक से पहचाना होता तो वह उसे ऐसे ही छोड़कर नहीं जाते उसकी अनुज्ञा लेकर जाते। चोरी चोरी घर छोड़कर उन्होंने समस्त नारी समाज को कलंकित किया है। वह प्रश्न करती है कि क्या नारियां वास्तव में वासना की चेरी है ? उसे हृदय से इस प्रश्न का स्पष्ट ही नकारात्मक उत्तर मिलता है यशोधरा को अपने स्वामी से शिकायत यह है -

"मुझको बहुत उन्होंने माना
फिर भी क्या पूरा पहचाना
मैंने मुख्य उसी को जाना
जो भी मन में लाते
सखि वे मुझसे कहकर जाते।।"[10]

वस्तुतः इस ग्रंथ की रचना ही उपेक्षित नारी यशोधरा के चरित्र को ऊंचा उठाने के लिए हुई है। उसी की करुण गाथा को ग्रंथों के उद्देश्य से गुप्त जी ने इस काव्य की रचना की है। यशोधरा पति के विरह में इतनी दुखी होती है कि वह अपने पति का ही अनुसरण करती है। उसका मानना है कि यदि मेरे पति तपस्या करें सभी सांसारिक कष्ट सहे तो मैं राज का भोग क्यों करूं ? इस कारण वह अपने सिर के बाल कटवा लेती है। जो कि नारी का मुख्य श्रृंगार है।

यशोधरा जब भी वियोग को नहीं सह पाती तो अपने को इस जगत से छुटकारा पाने के लिए प्राण विसर्जन भी नहीं कर पाती क्योंकि सिद्धार्थ ने यशोधरा को राहुल के पालन पोषण की जिम्मेदारी देकर गए थे -

"स्वामी मुझको मरने का भी देने गए अधिकार
छोड़ गए मुझ पर अपने उस राहुल का भार।।"[11]

यशोधरा का मानना है कि सिद्धार्थ ने जो कृत्य किया उससे सभी नारी जाति का अपमान है। उन्होंने रात में सोते बच्चे व पत्नी को छोड़ कर जाना नारी समाज के लिए कलंक है। यशोधरा कहती है कि उन्होंने मुझको जाना ही नहीं यदि वह मुझे अच्छी तरह से जान पाते तो ऐसा कदाचित नहीं करते, क्योंकि मैं उनके मार्ग में कभी बाधा नहीं बनती इस कृत्य से उसे हार्दिक क्लेश होता है -

"सिद्धि हेतु स्वामी गए यह गौरव की बात
पर चोरी चोरी गए यही बड़ा आघात।।"[12]

सिद्धार्थ के जाने के बाद यशोधरा को अधिक पीड़ा होती है। उसका इस समय कोई साथी नहीं है। वह अपने घर में ही आज पराई हो गई है। सिद्धार्थ ने जिस प्रकार त्याग किया है उससे नारी जाती को अधिक कष्ट होता है, क्योंकि वह समाज में एकता की दृष्टि से देखा जाता है। यशोधरा पति परायणा है अपने पति के त्याग में उसे अधिक पीड़ा होती है। उसके आंखों से निरंतर बादल के समान वर्षा होती रहती है -

"जल में शतदल तुल्य सरसते
तुम घर रहते हम न तरसते
देखो दो-दो मेघ बरसते
मैं प्यासी की प्यासी आओ हो बनवासी।।"[13]

क्योंकि उसके कारण वह सदैव सजग रहती है और समाधि में लीन रहती है। वह अपने अंतर में ही प्रिय के दर्शन कर लेती है। यशोधरा ने विरह वर्णन के प्रसंग में कतिपय ऐसे कार्यक्रमों का भी उल्लेख किया है। जिसमें 'उर्मिला' की सहायता उदारता लोकमंगल की कामना आदि प्रवृतियों पर भी प्रकाश पड़ता है। चित्रकारी, संगीत आदि के अतिरिक्त वह परिवार के कामों रसोई बनाने सांसों की सेवा करने आदि में व्यस्त रह कर अपना समय काटती है। वह ऐसे काम भी करती है जिसमें प्रजा का कल्याण होता है। प्रोषितपतिकाओ को बुलाकर उनकी दुख गाथा सुनना, पुर बाला सखा और उन्हें विविध ललित कलाओं का ज्ञान प्रदान करना आदि इसी प्रकार के कार्य है -

"सूखा कंठ पसीना छूटा मृगतृष्णा की माया
झुलसी दृष्टि अंधेरा दिखा दूर गई वह छाया।।"[14]

प्रियतम के विरह में केवल मुझे ही नहीं बल्कि सबको कष्ट सहन करना पड़ रहा है। गुप्त जी की यशोधरा में सूर की गोपियों की भांति के ईर्ष्या की भावना नहीं रखती। गुप्त जी की यशोधरा और तथा उर्मिला का विरह एकांतिक नहीं है। वह शुक्ल जी के शब्दों में "सांपिन भई सेजिया और बैरिन भई रतिया" तक सीमित नहीं इसका विस्तार एक और महल की चारदीवारी को लांग कर प्रसाद से संलग्न उपवन तक है और दूसरी ओर गृहस्थ जीवन में

कर्तव्य पालन और नगर के कल्याण मंगल की चिंता से भी है। यदि वह एकांत में अधिक रहती भी है तो उसका कारण यह है कि उसकी दयनीय दशा देख उसकी तीनों सांसे क्षुब्ध होने लगती है। प्रिय वियोग का उसे दुख है किंतु वह यह समझ कर हृदय को सांत्वना देती है कि उसकी मलिन गुजरी में राहुल जैसा लाल छुपा है।

मां यशोधरा अब उस शिशु को पुचकारती तथा चुमती है। कभी खिलाती पिलाती है और कभी प्यार करती है। स्वयं गलगल कर पुत्र को पालती पोषती है। आरंभ में तो दुखी नहीं यशोधरा राहुल के रोने पर खींच व्यक्त करती है किंतु धीरे धीरे उसकी वृतियां राहुल में केंद्रित हो जाती है और दिन-रात की परिचर्चा में लगी रहती है -

"बेटा मैं तो हूं रोने को
तेरे सारे मल धोने को
हंस तू है सब कुछ होने को।।"[15]

अपनी विरह वेदना को कम करने के लिए अपने पुत्र राहुल के साथ खेलती भी है -

"ठहर बाल गोपाल, कन्हैया, राहुल, राजा भैया।
कैसे धाऊं, पाऊं तुमको, हार गई मैं गई मैं दैया।।"[16]

विरहिणी यशोधरा सदैव प्रियतम के ध्यान में लीन रहती है और उसके गुणों का स्मरण कर और भी दुखित हो जाती है। जब उसका हृदय भर आता है तो वह अपने स्वामी के गुणों के विषय में दूसरों को बताकर हृदय का भार कम्ब करने की कोशिश करती है। विरह दग्धा यशोधरा के लिए उसके स्वामी के गुणों का स्मरण ही सहारा है।

यशोधरा को प्रकृति के उपवनों में भी प्रियतम का ही रूप दृष्टिगत होता है वह सूर की गोपियों की तरह उपवन को नहीं कोसती उसे जलने को नहीं कहती बल्कि उसे ऐसा प्रतीत होता है कि गौतम के मंगलमय भाव ही इन फूलों में फूट पड़े हैं -

"स्वामी के सद्भाव फैलकर फूल-फूल में फूटे।
उन्हें खोजने को ही मानो नूतन निर्झर छूटे।।"[17]

उद्वेग की स्थिति में यशोधरा को रम्य पदार्थ की निरस्त जान पड़ते हैं हृदय वेदना बोझिल है इसलिए वह त्रिविध समीर को भी भर्त्सना करती है -

"पवन तू शीतल मंद सुगंध,
ईधर-किधर आ भटक रहा है ? उधर उधर को अंध।
तेरा भार सहे न सहे यह मेरे अबल स्कंद,
किंतु बिगाड़ न दे ये सांसे तेरा बना प्रबंध।।"[18]

अंत - अंत तक यशोधरा इस प्रकार का वियोग सहती है क्योंकि वह इसे सहना अपना पत्नी धर्म मानती है -

"धर्म लिए जाता आज मुझे उसी और है।।"[19]

यशोधरा को यह विश्वास है कि जिस प्रकार सिद्धार्थ सिद्धि पाने को गए हैं उसी प्रकार वह लौट भी आएंगे और अपना गृहस्थ बार फिर से उठाएंगे -

"गए लौट भी वे आवेंगे
कुछ अपूर्ण अनुपम लावेंगे
रोते प्राण उन्हें पावेंगे
पर क्या गाते-गाते।।"[20]

यशोधरा का मानना है कि भक्त कभी भगवान के पास नहीं जाते स्वयं भगवान चलकर भक्तों के पास आते हैं ।

निष्कर्ष

मैथिलीशरण गुप्त का स्थान द्विवेदी युग के कवियों में निर्भ्रांत रूप से सर्वोच्च है। राष्ट्रीय जागरण को व्यापक रूप में साहित्य की अंतर्वस्तु बनाकर द्विवेदी युग में मैथिलीशरण गुप्त ने देश की जनता के साथ ध्वनि और विस्तृत संपर्क स्थापित किया है। उन्होंने सर्व धर्म समन्वय के प्रति सम्मान आदर और आत्मीयता के भाव प्रकट किए उन्होंने परंपरागत स्त्री को आधुनिक संदर्भों में लाने का प्रयास किया है। उर्मिला यशोधरा जैसी हिडिंबा, कैकयी, मंथरा आदि के चरित्रों को परंपरागत नारी विषयक अवस्थ दृष्टिकोण से हटाकर एक अपेक्षित और स्वस्थ दृष्टिकोण प्रदान किया है।

जब सिद्धार्थ गौतम बुद्ध बनकर वापस आते हैं। तब वह स्त्री की महत्ता को स्वीकारते हैं तथा यशोधरा से माफी मांगते हैं। जिस प्रकार की धारणा समाज में स्त्रियों के प्रति है उसे बदलने का प्रयास उनके काव्य में है। अतः यशोधरा में परंपरागत नारी विषयक अस्वस्थ दृष्टिकोण से हटकर एक अपेक्षित और स्वस्थ दृष्टिकोण प्रदान किया गया है।

सन्दर्भ सूची

1. द्वापर / मैथिलीशरण गुप्त / पृष्ठ 43
2. वही / पृष्ठ 44
3. वही / पृष्ठ 45
4. वही / पृष्ठ 46
5. साकेत / मैथिलीशरण गुप्त / पृष्ठ 54
6. वही / पृष्ठ 34
7. हिन्दी साहित्य का इतिहास /आचार्य रामचन्द्र शुक्ल / पृष्ठ 54
8. वही / पृष्ठ 53
9. यशोधरा / मैथिलीशरण गुप्त / पृष्ठ 53
10. वही / पृष्ठ 56
11. वही / पृष्ठ 32
12. वही / पृष्ठ 33
13. वही / पृष्ठ 34
14. वही / पृष्ठ 35
15. वही / पृष्ठ 36
16. वही / पृष्ठ 37
17. वही / पृष्ठ 37
18. वही / पृष्ठ 38
19. वही / पृष्ठ 38
20. वही / पृष्ठ 39